श्री शंकर शिक्षायतन

वैदिक शोध संस्थान

द्वारा समायोजित

वैदिकविज्ञान-व्याख्यानमाला

गीताविज्ञानभाष्य-ज्ञानयोगविमर्श

प्रतिवेदन

श्रीशंकर शिक्षायतन(वैदिक शोध संस्थान), नई दिल्ली द्वारा २६ फरवरी २०२२ को **वैदिकविज्ञान-व्याख्यानमाला** के अन्तर्गत **गीताविज्ञानभाष्य-ज्ञानयोगविर्श** विषयक अन्तर्जालीय व्याख्यान का समायोजन किया गया। पं. मोतीलाल शास्त्री द्वारा प्रणीत गीताविज्ञानभाष्य के अन्तर्गत राजर्षिविद्या एक महत्त्वपूर्ण विषय के रूप में प्रतिपादित है। इस राजर्षिविद्या के अन्तर्गत सात उपनिषदों में निहित कुल ५० उपदेशों को समाहित किया गया है। इसी राजर्षिविद्या के प्रथम उपनिषद् के अन्तर्गत विवेचित सात उपदेशों में श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय के श्लोकों को अधार बनाया गया है। इन्हीं सात उपदेशों को आधार बनाकर शास्त्रीजी द्वारा प्रतिपादित ज्ञानयोग विषय पर यह व्याख्यान समायोजित था।

कार्यक्रम में उपस्थित प्रो. सन्तोष कुमार शुक्ल, समन्वयक, श्री शंकर शिक्षायतन, नई दिल्ली ने अपने बीजवक्तव्य में कहा कि गीताविज्ञानभाष्य में पं. शास्त्री जी ने चार विद्याओं का अत्यन्त विस्तार से वर्णन किया है। ये विद्याएँ हैं- राजर्षिविद्या, सिद्धिविद्या, राजविद्या और आर्षविद्या। राजर्षिविद्या में वैराग्यबुद्धियोग, सिद्धिविद्या में ज्ञानबुद्धियोग, राजविद्या में ऐश्वर्यबुद्धियोग एवं आर्षविद्या में धर्मबुद्धियोग इन चार बुद्धियोगों का निरूपण हुआ है। राजर्षिविद्या का स्पष्ट संकेत गीता के चौथे अध्याय में मिलता है। वहाँ भगवान् इतिहास के क्रम से कहते हैं कि यह योग सर्वप्रथम मुझ से सूर्य को, सूर्य से वैवस्वत को, वैवस्वत से मनु को और मनु ने इक्ष्वाकु को प्रदान किया। इस प्रकार परम्परा से प्राप्त इस योग को राजर्षियों ने प्राप्त किया।–

'इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥
एवं परम्परा प्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ॥' (गीता ४.१-२)

प्रथम वक्ता के रूप में विषयवस्तु को उद्घाटित करते हुए प्रो. सरोज कौशल, आचार्य, संस्कृत विभाग, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर ने इस राजर्षिविद्या के प्रथम उपनिषद् के अन्तर्गत विवेचित तीन उपदेशों को आधार बनाकर अपना सारगर्भित व्याख्यान दिया। उन्होंने बतलाया कि प्रथम उपदेश में भी तीन उपदेश हैं-जन्ममरणद्वन्द्व, सुख-दुःखद्वन्द्व और सदसद्-द्वन्द्व।

जन्ममरणद्वन्द्व के अन्तर्गत यह बतलाया गया है कि जिस प्रकार जीवात्मा इस देह में बालक रूप में, युवा रूप में और वृद्धावस्था के रूप में रहता है उसी प्रकार उसे दूसरे शरीर की प्राप्ति होती है। उस विषय में विद्वान् पुरुष मोहित नहीं होता है-

'देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥' (गीता २.१३)

सुख-दुःखद्वन्द्व के अन्तर्गत भगवान् कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि दुःख और सुख को समान समझने वाले जिस विद्वान् पुरुष को ये इन्द्रिय और विषयों के संयोग व्याकुल नहीं करते ,वह पुरुष मोक्ष का अधिकारी होता है-

'यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते॥' (गीता २.१५)

सदसद्-द्वन्द्व के अन्तर्गत भगवान् कहते हैं कि असत् वस्तु की सत्ता नहीं है और सत् का अभाव नहीं है। इस प्रकार इन दोनों का ही तत्त्व तत्त्वज्ञानी पुरुषों के द्वारा देखा गया है-

'नासतो विद्यते भावो न भावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः॥' (गीता २.१६)

द्वितीय वक्ता डॉ. शोभा मिश्रा, उपाचार्य, संस्कृत विभाग, विक्रमाजीत सिंह सनातन धर्म महाविद्यालय, कानपुर ने इस राजर्षिविद्या के प्रथम उपनिषद् स्थित चौथे उपदेश से अन्तिम सातवें उपदेश के विषय वस्तु को अत्यन्त ही प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि चौथे उपदेश का संबन्ध प्रथम उपदेश से है । प्रथम उपदेश में जन्म-मरणद्वन्द्व से अव्यय आत्मा मुक्त रहता है। इस विषय का उपदेश चौथे उपदेश में दिया गया है। वहाँ कहा गया है कि हे अर्जुन ! जो पुरुष इस आत्मा को नाशरहित, नित्य, अजन्मा और अव्यय के रूप में जानता है, वह पुरुष कैसे किसको मरवाता है और कैसे किस को मारता है-

'वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्॥'(गीता २.२१)

उन्होंने बतलाया कि पांचवें उपदेश में कहा गया है कि इस अव्यय आत्मा का कभी विनाश नहीं होता है। इस अव्यय को शस्त्र नहीं काट सकते, अग्नि नहीं जला सकता, पानी सड़ा नहीं सकता और वायु शोषण नहीं कर सकता है-

'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः॥' (गीता २.२३)

छठे उपदेश में कहा गया कि जन्ममरण द्वन्द्व है। इस भोक्तात्मा अर्थात् कर्मात्मा में अनादि काल से जन्ममरणद्वन्द्व प्रवाह रूप में हमेश चला आ रहा है। क्योंकि उत्पन्न वस्तु की मृत्यु निश्चित है एवं मृत वस्तु की उत्पत्ति निश्चित है। इसलिए श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि कभी न रोके जाने वाले इस प्राकृतिक नियम के सम्बन्ध में अर्जुन तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए -

'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥' (गीता २.२७)

शोभा मिश्रा ने बतलाया कि सातवें उपदेश में पं. शास्त्री जी लिखते हैं कि अव्ययात्मा नित्य और असंग है। शरीर भी नित्य और असंग है। दोंनों में रात्रि और दिन के समान विरोध है। दोनों का संबन्ध नहीं होना चाहिए था परन्तु संबन्ध हो रहा है। यही अनिर्वचनीयता है। इसके विषय में गीता का यह वचन प्रमाण है। जहाँ कहा गया है कि इस आत्मा को कोई आश्चर्यमय देखता है, कोई इसको आश्चर्यमय कहता है और कोई इसे आश्चर्यमय सुनता है। सुनकर भी कोई इसे यथार्थरूप से नहीं जानता है। ऐसी अवस्था में भौतिक शरीर पर कोई शोक नहीं करता है-

'आश्चर्यवत् पश्यति कश्चिदेनम्
आश्चर्यवद् वदति तथैव चान्यः ।
आश्चर्यवच्चैवमन्यः शृणोति
श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥' (गीता २.२९)

कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे प्रो. गिरीश चन्द्र पन्त, आचार्य, जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि इस रजर्षिविद्यानामक ग्रन्थ में अनेक विषयों को पं. शास्त्री जी ने समाहित किया है। इसमें कठोपनिषद् एवं बृहदारण्यक उपनिषद् के मन्त्रों को उद्धृत करते हुए विषय को वैज्ञानिक एवं सरल रीति से प्रतिपादित किया गया है। पं. शास्त्री जी ने जो द्वन्द्व तत्त्वों का वर्णन उपदेश के माध्य से किया है । उसके बारे में वे लिखते हैं कि साधारण मनुष्य को पुण्य से आत्मोद्धार होता है, ऐसा समझता है। पाप से आत्मा शोकग्रस्त होता है। वैदिकविज्ञान के अनुसार पाप और पुण्य दोनों ही बन्धन के कारक हैं। जब तक इन द्वन्द्वों से मनुष्य मुक्त नहीं होता है। तब तक वह आत्मोन्मुखी नहीं हो सकता है। इसका कारण कामना है। निष्काम आत्मा ही द्वन्द्वातीत बन कर निर्द्वन्द्व परमात्मभाव को प्राप्त होता हुआ शोक का तरण करने में समर्थ होता है। इसी विषय को कठोपनिषद् में कहा गया है कि जिस समय संपूर्ण कामनाएँ, जो मनुष्य के हृदय में आश्रय करके रहती हैं, मुक्त हो जाती हैं, उस समय वह मर्त्य अमर हो जाता है और इस शरीर से ही ब्रह्मभाव को प्राप्त हो जाता है-

'यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि स्थिताः ।
अथ मर्त्योऽमृतो भवति अत्र ब्रह्म समश्नुते ।।' (कठोपनिषद् २.३.१४)

इस व्याख्यान कार्यक्रम का शुभारम्भ श्री ब्रह्मा वेद विद्यालय, वाराणसी के वेदाचार्य श्री अनयमणि त्रिपाठी के वैदिक मङ्गलाचरण से एवं समापन उन्हीं द्वारा प्रस्तुत शान्तिपाठ से हुआ। कार्यक्रम का संचालन श्रीशंकर शिक्षातन वैदिक शोध संस्थान के वरिष्ठ शोध अध्येता डॉ.मणि शंकर द्विवेदी एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. लक्ष्मी कान्त विमल ने किया। गूगलमीट के माध्यम से समायोजित इस कार्यक्रम में देश के विविध विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विविध शैक्षणिक संस्थानों से लगभग २०० प्रतिभागियों ने सम्मिलित होकर इसे सफल बनाया।